शोध-प्रपत्र (Research Paper)

लेखकीय आत्मसंघर्ष और जन मनोविज्ञान

संदर्भ:स्वदेश दीपक ‘मैने मांडू नहीं देखा’

डॉ. विपिन कुमार शर्मा
एसोसिएट
सहायक प्राध्यापक,हिंदी
श्री बाबू कलीराम राकेश राजकीय महाविद्यालय चुड़ियाला,रूडकी

भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान
राष्ट्रपति निवास,शिमला

लेखकीय आत्मसंघर्ष और जन मनोविज्ञान

संदर्भ:स्वदेश दीपक 'मैने मांडू नहीं देखा'

प्रस्तावना:

आधुनिक समय भौतिक स्थितियों के प्रति जागरूक रहने के साथ-साथ मन के आंतरिक संसार के प्रति भी जागरूक रहने का समय है, प्राय: देश दुनिया में मन की उलझनें और तनाव बढ़ रहे हैंl ऐसे में सामूहिक मनोविज्ञान पर ध्यान देने की आवश्यकता हैlविश्व में मनोवैज्ञानिक लोगों में बढ़ रही चिंता, तनाव, असंतोष ,आत्महत्या की प्रवृत्ति को लेकर चिंतित हैंl कई महत्वपूर्ण मानसिक स्वास्थ्य से संबंधित रिपोर्ट इस और संकेत कर रही हैं,भारत एक अलार्म की स्थिति में है, मानसिक रोग और मनोचिकित्सक के बीच काफ़ी दूरी हैl लेकिन मानसिक स्वास्थ्य हमारी सामूहिक विमर्श और नीतियों, स्वास्थ्य बजट में बहुत कम आ पाता है.यह शोध पत्र हिंदी के चर्चित साहित्यकार स्वदेश दीपक की डायरी' मैने मांडू नहीं देखा' को आधार बनाकर हमारे समाज में लेखकीय उपस्थिति,लेखकीय आत्मसंघर्ष ,मनोरोगियों के प्रति समाज की दृष्टि का विश्लेषण करेगा.
हिंदी साहित्य जगत में स्वदेश दीपक की प्रबल और सघन उपस्थिति रही हैlमगर स्वदेश दीपक एक मानसिक रोग 'बाइपोलर डिसऑर्डर' की चपेट में आते हैं , स्वदेश दीपक एक लंबी यंत्रणा से उबरने के पश्चात अपनी डायरी में अपनी मनोदशा को दर्ज़ करते हैंl हिंदी साहित्य जगत में यह रचनात्मक अभिव्यक्ति के रूप में दर्ज़ होती हैl इस कृति के माध्यम से भारतीय समाज की मनोरोगियों के प्रति दृष्टि का भी विश्लेषण किया जाएगा.

बीज शब्द:

मनोदशा,लेखकीय आत्मसंघर्ष, बाइपोलर डिसऑर्डर, सामाजिक मनोस्थिति , स्वयं में अनुपस्थित ,लेखकीय दृष्टि

शोध प्रपत्र :

भारतीय समाज परम्परा और आधुनिकता के बीच द्वंद में अटका हुआ समाज हैl नागरिक समुदाय में मानसिक स्वास्थ्य से जुड़े मुद्दों को लेकर उदासीनता का माहौल हैl स्वदेश दीपक की प्रसिद्व डायरी 'मैने मांडू नहीं देखा' एक लेखक की उदासियों का बयान नहीं है,बल्कि समाज के अंदर उभर रही 'वैयक्तिकता और अकेलापन' कई तरह के संकेत कर रहा हैlइन संकेतों को समाज –विज्ञानी और मनोवैज्ञानिक काफ़ी समय से समझने का प्रयास कर रहे हैंl भारतीय परिवार निरंतर एकल होते जा रहे हैं, सांझापन जो भारतीय समाज की विशेषता होती थी,निरंतर उसका क्षरण हुआ हैl 'पर्सनल स्पेस' की मांग भारतीय समाज में शुरुआती दौर में सघन चाहना के रूप में उत्पन्न हुईl तेजी से नव मध्यवर्ग में अकेलेपन और व्यक्तिगत आजादी के आनंद ने उन्हें सामूहिकता और सामूहिक भाव से विलग कर दियाl यहीं से समाज के मानसिक स्वास्थ्य में तब्दीली आनी शुरू हुई, औद्योगिकीकरण, शहरीकरण, उत्तर आधुनिक जीवन पद्धति ने भारतीय समाज को तनाव,उदासी,चिंता,अवसाद की और धकेल दिया l प्रतिष्ठित लंदन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स के ब्लॉग पर भारतीय जनसमूह की मनोदशा को लेकर निहारिका राजगोपाल का लेख,'Lonley ,under presure and young:the mental well-being of india's young' नामक रिपोर्ट में कहता है.'भारत दुनिया का सबसे ज़्यादा अवसाद ग्रस्त देश हैl यह विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO)की अवसाद पर आधारित रिपोर्ट के अनुसार है ......पूरा देश एक मानसिक स्वास्थ्य संकट से जूझ रहा है लेकिन इसे समझने के लिए तैयार नहीं है, जबकि यह एक बड़ा जोखिम हैl यह समझा जा सकता है कि अवसाद या किसी भी आत्महत्या को भड़काने वाली मानसिक बीमारी के उपचार का अंतर 80–86% के बीच क्यों है और

क्यों अवसाद से ग्रस्त 20–37 %भारतीय कलंकित होने के डर से उपचार नहीं करवाते हैं। बेशक हाल के वर्षों में इन समस्याओं के समाधान के लिए बड़े प्रयास हुए हैं, जिनमें उपचार सेवाओं का विस्तार केंद्रित हस्तक्षेप शामिल है।'[(1)]

लंदन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स की रिपोर्ट को आंकड़ों के उतार –चढ़ाव से ज्यादा उस मर्म के लिए देखा जा सकता है,जो मनोरोगियों के प्रति समाज की दृष्टि है।इस बात को हम ज्यादा गहराई से समझते हैं स्वदेश दीपक के मानसिक –संघर्ष और उलझन से जूझते हुए निरंतर अकेले पड़ते चले जाने, चिड़चिड़े होते चले जाने में। स्वदेश की आत्मकथात्मक डायरी 'मैने मांडू नहीं देखा' को मनोरोगी के प्रति हमारे समाज की दृष्टि को लेकर एक प्रमाणिक पाठ के रूप में लिया जाना चाहिए । प्रख्यात कवि एवं चिकित्सक विनय कुमार ने मनोचिकित्सक की डायरी लिखी थी,उसके साथ इस डायरी को मिलाकर हम चीज़ों को समग्रता में समझ पाएंगे।

'मैने मांडू नहीं देखा' को पढ़ते हुए रचनात्मक लोगों की बेचैनियों , तकलीफों और मूलतः समाज के सामूहिक मानसिक स्वास्थ्य से जोड़कर देखा जाना चाहिए,ऐसे बहुत से लोग हैं जो खुद में एब्सेंट हो गए हैं,साथ रहते हुए भी स्वयं से भी अनुपस्थित । समाज के लिए तो तो वह पहले से ही अतिरिक्त थे। मैने मांडू नहीं देखा किताब धीरे–धीरे हमें असुविधाजनक प्रश्नों से रूबरू कराती है,हमारे जीने और कहने–दिखने में बहुत बड़ी फांक है।समाज के सामने खुद को आदर्शवादी और कोमल के रूप में स्वयं को प्रदर्शित करते हैं।लेकिन वास्तविक जरूरतमंदों के प्रति निर्मम और रुखे होते हैं। मैने मांडू नहीं देखा की बात करें तो,स्वदेश दीपक धीरे–धीरे भ्रम और चिंताओं और अत्यंत क्रोध जिसे तैस भी कहा जाता है, कि चपेट में आने लगे।एक सामान्य स्थिति में हम चीज़ों को सहजता में लेते हैं,अंततः अलार्म बज ही उठता है। स्वदेश दीपक को मित्रों की सलाह पर मनो रोग विशेषज्ञ के पास जाना होता है, अंततः डॉक्टर द्वारा उन्हें 'बायोपोलर डिसऑर्डर' नामक मनोरोग एक मनोरोग विशेषज्ञ द्वारा बताया गया। फिर शुरू होती है सात साल लंबी अंधेरी गुफा,गहरी यंत्रणा।'एक मनोरोगी के अपने डर और भयावह कल्पनाओं,जो उसके इर्द–गिर्द मकड़ी के जाले की तरह लिपटी हुई हैं 'का एक रहस्यमयी संसार–

'यादें आती तो लगातार आती, स्मृतियों का शब्द कोश खुल जाता।कहीं से भी।और उन्हें किसी सिलसिले में पिरोने की कोशिश में हताश हो जाता'[(2)]

यह एक ऐसे व्यक्ति की त्रासदी है जिसने अपने लेखन से पाठकों में विशिष्ट जगह बनाई,उनका नाटक 'कोर्ट मार्शल' हिंदी पाठक समुदाय में लोकप्रियता के पैमानों का अतिक्रमण करता है। इतना पाठकीय प्रेम बहुत कम लेखकों को नसीब होता है,जितना स्वदेश दीपक को मिला। कई बार स्वदेश दीपक के बारे में सोचते हुए महसूस होता है इतनी प्रसिद्धि, सामाजिक प्रतिष्ठा, एक बेहतर कैरियर,और जो इस दुनिया में जीने के लिए एक इंसान को चाहिए,वह सब कुछ होने के बावजूद कोई व्यक्ति कैसे एक अनकही अंधी गहरी गुफ़ा में चला जाता है, यह सोचने का विषय है। स्वदेश दीपक के अंदर जो आग थी, कागज़ पर उतरकर उसने प्रकाश किया। मगर एक बेलौस, बेलोच अंदाज़ से वह कैसे निपट अकेले होते चले गए यह 'बाइपोलर डिसऑर्डर' नामक उनकी बीमारी में छिपा हुआ है। उन्हें लगता है एक स्त्री उनका पीछा कर रही है। कोलकाता से यह प्रसंग शुरू होता है, एक प्रशंसक के रूप में जब वह कहती है,' मैने मांडू नहीं देखा,आपके साथ मांडू देखना चाहूंगी'.स्वदेश द्वारा उसकी अवमानना की जाती है और फिर यातनाओं का लंबा दौर शुरू होता है। एक परछाई ,एक भ्रम स्वदेश का सतत् पीछा करता है,

'उस रात में काली पड़ गई नदी में तैरता रहा।लगातार सोया.वह आती तो क्या थोड़े से दुःख साथ ले जाती है? वे दुःख जो उसने दिए। जो अब तक बताए नहीं। सुनने वाला वहम कहकर टाल देगा। नहीं तो मखौल जरूर उड़ाएगा। पता नहीं क्यों परिवार वालों को, परिचितों को पक्का विश्वास हो जाता है कि मनोरोगी झूठ बोल रहा है। उसे कुछ नहीं हुआ।लोगों की सहानुभूति हासिल करने के लिए बिस्तर पर पड़े रहता है.[(3)]

मनोरोगियों के प्रति संवेदनशीलता दृष्टि को लेकर तमाम रिपोर्ट,शोध बात करते हैं लेकिन समाज के यथार्थ को समझना हो तो वास्तविक स्थिति समाजशास्त्रियों के डेटा से ज्यादा,इस डायरी में मिलेगी.स्वदेश दीपक सात साल लंबे उस निर्वासन को भोगकर वास्तविक जीवन में लौटे. देश–दुनिया के साहित्य में मनोरोगी के निज अनुभवों के दर्ज करने के ब्यौरे बहुत कम मिलते हैं. इस दृष्टि से 'मैने मांडू नहीं देखा' विशिष्ट है, और हिंदी के लिहाज़ से दुर्लभ कृतिl

स्वदेश दीपक की यंत्रणा से भारतीय समाज तब परिचित होता है,जब इंडियन एक्सप्रेस समाचार पत्र में निरुपमा दत्त लिखती हैंl स्वदेश दीपक ने कभी नहीं चाहा,उनकी बीमारी के बारे में लोगों को पता चले,अपनी मित्र निरुपमा को भी वह मना करते हैं–

फोटो क्यों ले रही हो

आपके बारे में लिखना है

मेरी बीमारी के बारे में कुछ मत लिखना

क्यों

लोगों को पता चल जाएगाl जान –पहचान वाले देखने आएंगेl आई.डोंट वांट फ्रेंड्स टू सी मी इन दिस कंडीशनl

तो मैं लिखूंगी क्या!एक्सप्रेस की स्पेशल असाइनमेंट है,इसीलिए तो चंडीगढ़ से टैक्सी में आई हूंl[(4)]

निरुपमा दत्त जैसी पत्रकार विषय के मर्म और अन्य व्यक्ति की निजता को गहराई से समझने वाली पत्रकार हैं,उनकी रिपोर्टिंग के माध्यम से हमें हिंदी के जीनियस कथाकार के यंत्रणा के दरिया में डूबे होने का अहसास हुआlवह भी बेहद प्रतीकात्मक रूप सेl एक पत्रकार– कलम नवीस को इतना संवेदनशील होना ही चाहिए.इस कठिन समय की स्मृति में निरुपमा दत्त का मैने मांडू नहीं देखा में जिक्र है–

निरुपमा दत्त चली गईl वह नाटक कोर्ट मार्शल की दीवानी हैlदूसरे दिन उसका आर्टिकल आया–' the Trial survives from kafka to swdesh Deepak'.नीरू ने सब कुछ कहा,लिखा, लेकिन बीमारी के बारे में कुछ पता नहीं चलने दियाl तभी तो सारे लेखक,कवि और चित्रकार मानते हैं–द लेडी विद ए गोल्डन पेन.'[(5)] एक लेखक अपने संघर्ष को गोपन रखना चाहता है,यह निरुपमा दत्ता जैसे लोग ही समझ सकते हैंl यह बात उस बिंदु से भी समझी जानी चाहिए,जहां स्वदेश दीपक जैसा लेखक खड़ा हैl

समाज में शारीरिक बीमारी को जिस तरीके से स्वीकार किया जाता ,अभी मानसिक बीमारी को लेकर वह सामूहिक समझ नहीं बन पाईl 'मैने मांडू नहीं देखा'हमें एक पाठक,एक नागरिक के रूप में कई बार सोचने को विवश करती है,हम एक व्यक्ति और एक समाज के रूप में कितने अपरिपक्व हैंlतमाम रिपोर्ट और आंकड़े हमें बताते हैं भारतीय समाज मानसिक स्वास्थ्य की दृष्टि से कहां हैl मानसिक समस्याओं की जड़ कहीं– न कहीं सामाजिक ढांचे में भी हैl प्रतिष्ठित शोध जर्नल द लैंसेट में 2019 में एक रिपोर्ट प्रकाशित हुई,जो बताती है'प्रत्येक 7 में से एक भारतीय अलग–अलग गंभीरता के मानसिक विकारों से प्रभावित थाl भारत में कुल रोग भार में मानसिक विकारों का आनुपातिक योगदान 1990 के बाद से लगभग दोगुना हो गया है' l[(6)]

प्रोफेसर ललित का लेख मनोरोगियों के प्रति भारतीय समाज की मानसिकता को तथ्यपरक दृष्टि से हमारे सामने रखता हैl बड़ा रोचक तथ्य यह भी है,जिस जगह यह लेख प्रकाशित है, लैंसेट नेशनल लायब्रेरी ऑफ मेडिसनlवहां मोटे–मोटे स्पष्ट अक्षरों में लिखा है,अनुदान बाधित होने की वजह से इस वेबसाइट को चलाना और अद्यतन करना कठिन हो रहा हैlतब हम सोच सकते हैं जब अमेरिका की यह स्थिति है तो भारत की क्या होगी?

स्वदेश दीपक अपनी आंतरिक बेचैनी, अकुलाहट को जीते रहते हैंl शब्दशिल्पी,जिसके लिखी की दुनिया प्रशंसक

है,वह महसूस करता है,उसके अंदर का शब्दों का स्रोत सूखने लगा है. वह शब्द भूल जाते हैं. जब अपने बेटे सुकांत को रॉबर्ट फ्रास्ट की कविता 'स्टॉपिंग बाय वुड्ज़ ऑन ए स्नोई इवनिंग' यह कविता भारत में अत्यंत लोकप्रिय हो गई जब भारत के प्रथम प्रधानमंत्री और लेखक, इतिहासकार पंडित जवाहरलाल नेहरू के निधन के पश्चात उनकी मेज पर इस कविता की अंतिम पंक्तियां पायी गई' एंड माइल्ज़ रखी पाई गई। जिस कविता को वह वर्षों –बरस अपने विद्यार्थीयों को पढ़ाते रहे मगर आज वह कविता अपने बेटे को नहीं पढ़ा पाए , बस इतना कहने लगे यह झूठे आत्मविश्वास से उत्पन्न, झूठी कविता है. कविता अच्छी होने से ज्यादा उसका कहा जाना महत्वपूर्ण है । बच्चे के लिए यह सब बातें एक अलग संसार की बातें थी. वह नाराज होकर चला जाता है. उतने बस इतना कहा कि,'फिर मैं कभी सहायता मांगने के लिए आपके पास नहीं आऊंगा'. और एक पुल हमेशा के लिए टूट जाता है ।असंबद्धता, बिखराव , चिड़चिड़ापन बढ़ता चला जाता है. कुछ वाक्य जैसे ' जब बहुत बड़ा पेड़ गिरता है,तो धरती हिलती है. वाट इज़ इनोसेंट। सैकड़ों सिक्खों का कत्ल कर दिया गया.(P.142) और भी चीजें–विचार चलते रहते हैंलेकिन एक असंगतता ,भ्रम,गहरे संदेह उनके अंदर समाहित होते चले जाते हैं–
वक्त आया कि आया। अपने ही घर का पता भूल जाऊंगा। जिंदगी हर सुबह लहूलुहान हो जाएगी। सात सालों के लिए.अपने तक शक करने लगेंगे। मेरा सब कुछ झूठा।यह सच क्यों कर बता पाऊंगा कि एक मादा अहरी ने मेरा आखेट कर डाला और दे दी सात साल लंबी मौत।मेरा अहंकार, पहाड़ जितना मेरा अहंकार । बन जाऊंगा युद्धबंदी.... कुछ दंड चुपचाप भोगने होते हैं[7]
इस डायरी में लेखक के ईमानदार बयान हैं,एक ऐसा लेखक जिसका लिखा अत्यंत चर्चित और साहित्य दायरों से भी बाहर अपनी विशेष जगह रखता है,धीरे–धीरे वह एक कल्ट में रूपांतरित हो जाते हैं। अपने नाटकों के लिए वह भारतीय समाज,साहित्य जगत और रंग निर्देशकों के वह प्रिय नाटककार रहे हैं । प्रख्यात निर्देशक रंजीत कपूर ने दिल्ली में कोर्ट मार्शल का प्रथम बार मंचन किया था,फिर सम्पूर्ण देश में मंचन का सिलसिला चला. मुहावरे की भाषा में कहें हिंदी एवं अंग्रेजी समाचार पत्रों में स्वदेश दीपक की प्रशंसा और रचनात्मकता आकाश छूने लगी. उषा गांगुली द्वारा कोर्ट मार्शल का कोलकाता में मंचन किया गया। बंगाल के एक महत्वपूर्ण आलोचक ने अंग्रेजी के महत्वपूर्ण समाचार पत्र में लिखा' ऑफ्टर कोर्ट मार्शल टैगोर हेज बिकम इर्रीवलेंट '[8] अब्राहिम अल्काजी जैसा जीनियस रंग निर्देशक 'जलता हुआ रथ 'को मंचित कराता है,अरविंद गौड़'सबसे उदास कविता'को मंचित करने की अभिलाषा रखते हैं,पीयूष मिश्रा स्वदेश के गहरे मुरीद, विख्यात चित्रकार जहांगीर सबावाला बिना मिले उनके लिखे के मुरीद, अभिन्न रिश्ता,बकौल सोबती शीला संधू का ब्लू आईज बॉय,निर्मल वर्मा उनके लिखे को सराहने वाले,नादिरा बब्बर खुद घर आती हैं मुंबई स्वदेश के नाटक मंचन के समय स्वदेश दीपक के स्वयं उपस्थित रहने का आग्रह लेकर. महेश भट्ट, नामवर सिंह सब लोगों की उपस्थिति.मगर स्वदेश फिर भी इस सबसे निस्पृह रहते हैं. भारत के प्रधानमंत्री पंडित अटल बिहारी वाजपेई 'कोर्ट मार्शल' देखने के इच्छुक. एक कलाकार क्या उम्मीद करता है,प्रशंसा–स्वीकृति और रचे पर ध्यान .मगर इस सबके बावजूद स्वदेश ने जो भोगा वह सिहरन उत्पन्न करता है,पाठक भी उनकी आपबीती पढ़कर ट्रॉमा में आ जाता है.

कोलकाता में 'कोर्ट मार्शल' के मंचन के बाद एक स्त्री,मायाविनी (ऐसा वह लिखते हैं) वह उन्हें निरंतर जिंदगी से अनुपस्थित करती चली जाती है. कोलकात्ता से आने के उपरान्त स्वभावगत बदलाव धीरे–धीरे प्रकट होने लगते हैं. और जूझने का एक क्रम चलता है.शब्दों का स्रोत सूख जाता है'मैं स्वदेश जिसके साथ–साथ शब्दों की नदी बहती थी।मेरा तो दायां हाथ, दाईं बांह मार दी उसने।कलम पकड़े तो कौन। नाड़ा बांधे तो कौन। लेकिन रोगी मन ने....दृष्टि दायरा सीमित कर दिया। भविष्य में देखने वाली आँखें बंद।[9] यह विवशता यहीं नहीं रूकती वह कहते हैं 'मेरी आत्मा में सुराख पड़ गए । अपमान और अवमानना के वर्ष , सुकांत उनका बेटा अपने साथियों से उन्हें

अपना पिता न बताकर रिलेटिव बताने लगा। नहाने में बाल्टी में डूब जाने का डर लगने लगा। मौसमों के प्रभाव,शारीरिक अनुभूतियां देह और मस्तिष्क में दर्ज होने बंद हो गई. वह निज को लिखते हैं' तब मुझे कहाँ पता था की सपने अर्थहीन हो जाएंगे और डरावने भी.तब मुझे कहां पता था कि अपने आज से भी इतनी घिन्न हो जाएगी, टुमारो मर जाएगा। तब मुझे कहां पता था कि काफ्का की कहानी'मेटामॉर्फेसिस का नायक हूं, जो एक कॉकरोच में बदलना शुरू हो चुका था। तब मुझे कहां पता था कि अपने लोग शक की निगाह से देखना शुरू हो जाएंगे। इसे कुछ नहीं हुआ है। बीमारी का बहाना कर रहा है।[10] स्वदेश घर में भी 'अजनबी' और 'अतिरिक्त'में परिवर्तित होना शुरू हो जाते हैं, मनोरोगों को हमारे यहां कोई रोग ही नहीं समझा जाता।एक सामान्य मनोविज्ञान काम कर रहा होता,इसे बुखार नहीं,कोई फ्रैक्चर नहीं,कोई मलहम पट्टी नहीं। मगर फिर भी मायूस और उदास क्यों रहता है। और करता कुछ क्यों नहीं, जैसे स्वदेश दीपक को सुनना पड़ता है'
गीता: सुकांत स्कूटर बाहर निकाल दो
सुकांत:क्यों
गीता:किसी बस,किसी ट्रक के आगे कूद जाए।पुलिस केस भी नहीं बनेंगा। खुद भी मुक्त हों। हम भी मुक्त।[11]
स्वदेश दीपक कहते हैं,झूठ कहा था शैली ने' ऍफ़ विंटर कम्ज़ केन स्प्रिंग बिफोर बिहाइंड' मेरा बसंत भी सात साल से उसके बटुए में बंद है.'ठीक होने का भ्रम कितना दुःखदाई है. वह खुद को कोसते रहते हैं. और लोगों का नजरिया निर्मम बना रहता है. सामाजिक जन मनोविज्ञान को परिवर्तित करने की आवश्यकता है. सब कुछ चूक जाता है,स्नेह–आत्मीयता अपनापन सब कुछ–
''इस बीमारी का सामना करने के लिए पहाड़ जितनी सहनशीलता चाहिए।पत्नी ठीक गालियां देती हैं। ठीक मारती हैं।आप तो बीमारी से जूझ रहे हैं। उसे सामाजिक कलंक और बीमारी दोनों का सामना करना है,आपके साथ अनहोना कुछ नहीं हो रहा।''[12] यह अपमान किसी को भी गर्त में और ज्यादा धकेलता है। जैसे स्वदेश दीपक का अवसाद और ज्यादा बढ़ता है–आत्महत्या का प्रयास –पहले मैं फकीर बना। फिर दरवेश बन गया। दुःख से ऊपर .सुख से ऊपर। कपड़ों को आग लगी। कुर्सी पर बैठा सिगरेट पीता रहा।आग अपना काम करती रही। मैं अपना. परिणाम पी.जी.आई चंडीगढ़.''[13] लगभग छ;माह पी.जी. आई चंडीगढ़ में इलाज।यहां की दुनिया अलग थी,यंत्रणाएं अलग। अर्द्धजला शरीर और मन की तकलीफ़ अलग, जिसे मस्तिष्क डी. कोड करने से इंकार करता है। परिणाम गहरी खामोशी। बोलने –कहने से इंकार करना। यहां डॉक्टर.अवनीत शर्मा, डॉक्टर. प्रताप शरण, डॉक्टर. चारी जैसे लोगों का मिलना. डॉक्टर. वसंथा का मिलना.

एक समाज के रूप हमें काफ़ी कुछ सीखना बाकी है,मनोरोगी की अवमानना समाप्त नहीं होती, ठीक कहते हैं डॉक्टर सरन ' विक्षिप्त देखा नहीं कि हमारे हाथ में पत्थर आ जाता है,यह जानते हुए भी इनमें हिंसक लोग बहुत कम होते हैं'।स्वदेश दीपक को लेकर हॉस्पिटल का स्टॉफ ही महसूस करने लगता है,इस व्यक्ति को डॉक्टर का इतना प्यार और सम्मान,ध्यान क्यों मिलता है. एक नर्स कहती है, ''जब भी यह आदमी खाने–पीने को कुछ मांगे,मेरे कमरे में ले आओ।मेरे सामने खायेगा। एक ग़लीज़ गंदे और बदसूरत आदमी पर डॉक्टर जान क्यों छिड़कते हैं!दो टके का पागल राइटर''[14] यह है हमारी दुनिया,यह हॉस्पिटल के सच से ज्यादा बाहर का सच ज्यादा है।

स्वदेश लिखते हैं''गीता का चेहरा तमतमा गया। कर सकती है ठीक इसे,लेकिन अस्पताल ने हमें डरपोक बना दिया है ''[15] अस्पताल गीता जी को ही नहीं,बल्कि भारत की बहुसंख्यक आबादी को भयभीत करते हैं। वह आंतरिक रूप से तोड़ते हैं,वहां बसंथा,डॉक्टर चारी,डॉक्टर.प्रताप शरण जैसे लोगों का मिलना सुखद और दुर्लभ है। मुझे लगता है इस पूरे वृतांत को स्वदेश दीपक के पुत्र संस्कृतिकर्मी –पत्रकार सुकांत दीपक के संस्मरण 'मुझे यकीन है

कि अब वह कभी लौटकर नहीं आएंगे'को भी देखा जाना चाहिए. एक मनोरोगी के साथ –साथ एक परिवार कितने तरीके से यंत्रणा भोग रहा होता है, यह संस्मरण हमें बताता है।प्रथम दृष्टया एक पाठक के रूप में यह संस्मरण हमें असहज करता है,क्योंकि स्वदेश दीपक हमारे लिए एक बड़ी शख्सियत हैं.लेकिन इसे थोड़ा ऑब्जेक्टिव होकर देखे जाने की आवश्यकता है. “तड़के तीन से साढ़े तीन बजे के बीच वह मेरे कमरे पर दस्तक देते,जिसमें भीतर से सिटकनी लगी होती थी।वह मेरा नाम पुकारते, बल्कि फुसफुसाते।कुछ देर तक मै ऐसा दिखावा करता, मानो मुझे कुछ सुनाई नहीं पड़ रहा हो।फिर मैं दरवाजे के करीब जाता,मगर खोलता नहीं।वह गिड़गिड़ाते 'मेरा सिर उस सरिए से फोड़ दो।मुझे मालूम है तुम अपने पलंग के नीचे सरिया रखते हो, मारो मुझे”और हर बार की तरह मैं उनसे कहता“दफा हो जाइए ,यहां से.” कहना न होगा कि मैने उनके साथ ऐसा बर्ताव किया,जैसा लोग–बाग अपने पालतू कुत्ते के साथ भी नहीं करते"[(16)] सुकांत बताते हैं यह ही स्थिति उनकी मां और बहिन की थी. वह लौटकर न आएं. हम जानते हैं घर से जाने की स्थिति 2006 है,इससे पूर्व वह भारतीय आयुर्विज्ञान विज्ञान संस्थान चंडीगढ़ में 6माह रहकर आ चुके थे।स्वास्थ्य सामान्य होने के संकेत मिलने लगे थे,मगर मानसिक रोग पूरी तरह से कभी ठीक नहीं होते, मनोचिकित्सक और दवाईयां और परिवार का सहयोग आवश्यक है।परिवार पहले ही थक चुका होता है।पुनर्वासन मनोरोगी के लिए एक बड़ी समस्या है।मैने मांडू नहीं देखा में बहुत सारे संदर्भ हैं जिनमें स्वदेश दीपक के प्रति लोगों का व्यवहार बेहद अपमानजनक है,अपनी मां के देहांत के पश्चात उन्हें लेकर संबंधियों द्वारा इशारा किया जाता है,जो उनके विक्षेप से संबंधित है,उनकी पत्नी कहती ही हैं' यदि मैं तुमसे पहले मरी, तुम मुझे अग्नि नहीं दोगे,सुकांत देगा'1 खैर,यह एक व्यक्ति के लंबे संघर्ष के बाद हताशा की ही परिणीति है,जिसने सब कुछ किया।मगर सार यह है जो इस तकलीफ़ को जी रहा है, और जो जीने में उसका सहयोग कर रहा है,हम उसे कुछ और ज्यादा उस और नहीं धकेल देते ,जिस और नरक जैसा कुछ है.

निष्कर्ष:

यह शोध पत्र मनोविज्ञान और जीवन को साथ लेकर चलता है। मैने मांडू नहीं देखा :स्वदेश दीपक की डायरी के माध्यम से एक लेखक की त्रासदी का साइको–एनालिसिस है, यह हमारे देश की मानसिक स्वास्थ्य की स्थिति को लेकर भी कुछ महत्वपूर्ण अंत:सूत्र हमें प्रदान करता है। अध्ययन और कुछ रिपोर्ट के माध्यम से यह प्रकट होता है,हम मानसिक स्वास्थ्य को लेकर सचेत नहीं हैं,मनोरोग विशेषज्ञ और मरीज के बीच एक गहरा फासला है।मनोरोग को सामाजिक कलंक से जोड़कर देखना मनोरोगी को हाशिए पर डालता है.

संदर्भ:

1.निहारिका राजगोपाल का लेख,'Lonley, under pressure and youngh:the mental well-being of india's young

Https://blogs.lse.ac.uk/south.asia/2019/09/27–lonley–under–presure–and–young

2.स्वदेश दीपक की डायरी,मैने मांडू नहीं देखा(), जुगरनाट बुक्स,2005

3.वहीं, प.120

4.वहीं प.40

5.वहीं,प,41

.6. मनोविज्ञान की प्रतिष्ठित पत्रिका लैंसेट में प्रकाशित आलेख'भारत के राज्यों में मानसिक विकार का बोझ: वैश्विक रोग अध्ययन:1990 –2017.यह लेख प्रोफेसर.ललित डंडोना का है.भारतीय चिकित्सा अनुसंधान

परिषद.लैंसेट 2020,feb;7(2):148–161(नेशनल लायब्रेरी ऑफ मेडिसिन,ऑनलाइन इनकी रिपोर्ट यहां देखी जा सकती है.NCBI https://share.google
7. स्वदेश दीपक की कथा डायरी ‘मैने मांडू नहीं देखा’.(P.58)
8.वहीं ,p.121
9.वहीं,पृष्ठ 19
10.वहीं पृष्ठ 68
11.वहीं,पृष्ठ75
12.वहीं,पृष्ठ
13,वहीं,पृष्ठ 13
14.वहीं,पृष्ठ 187
15.वहीं पृष्ठ 187
16.https//www.hindwi.org हिंदवी बेला पर चर्चित पत्रकार एवं संस्कृतिकर्मी,स्वदेश दीपक के पुत्र सुकांत दीपक के मूल आलेख का अनुवाद;‘मुझे यक़ीन है कि अब वह कभी लौटकर नहीं आएंगे’, अनुवाद: निशीथ यह मूल संस्मरण Papa,elsewhere जेरी पिंटो द्वारा संपादित पुस्तक,the book of light:when a Loved one has a different mind, 2016,प्रकाशक : स्पीकिंग टाइगर